



INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

Adharajan Ki Haryanvi Saang-Shaili Raginian: Pingal Shastra Evam Lok-Sanskritik Pariprekshya Mein Ek Vishleshanatmak Adhyayan (Ragini 1-8 Ke Sandarbh Mein)

अधराजण की हरियाणवी सांग-शैली रागणियाँ: पिंगल शास्त्र एवं लोक-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (रागणी 1-8 के संदर्भ में)

लेखक: आनन्द कुमार आशोधिया

स्वतंत्र शोधकर्ता एवं पूर्व वारंट ऑफिसर, भारतीय वायु सेना

पता: शाहपुर तुर्क, जिला सोनीपत, हरियाणा – 131001

Abstract

This research paper presents a comprehensive and critically grounded analysis of the Haryanvi Saang-style raginis (Ragini 1–8) from the narrative series Adharājan, examined through literary, prosodic, and socio-cultural perspectives. The study aims to investigate the narrative structure, emotional depth, gendered consciousness, and metrical organization of these compositions within the framework of Pingal Shastra. It argues that Haryanvi ragini is not merely an oral folk expression but a structured poetic tradition that reflects a dynamic synthesis of indigenous aesthetics and classical poetics.

The analysis demonstrates that the sequence of Ragini 1–8 follows a coherent narrative progression—from aesthetic awareness and emotional awakening to courtly interaction, intensification of love, social tension, and eventual assertion of dignity and conditional acceptance. The character of Raskapoor emerges as a central figure representing feminine agency, self-determination, and ethical consciousness, rather than merely a passive subject of desire. In contrast, the figure of Sawai Jagat Singh embodies the tension between royal authority and human vulnerability.

From a prosodic perspective, the study highlights the effective use of mixed syllabic metres, balanced caesura, patterned rhyme schemes, and rhythmic recurrence, all of which enhance both performative quality and aesthetic depth.

The study concludes that the raginis of Adharājan should be recognized not merely as performative folk compositions but as culturally significant literary texts that articulate complex intersections of love, power, morality, and gender, thereby contributing meaningfully to broader academic discourses in Indian folk literature and cultural studies.

Keywords

Haryanvi Folk Poetry, Ragni Tradition, Pingal Prosody, Oral Performance Culture, Indigenous Aesthetics, Narrative Poetics, Socio-Cultural Discourse, Gendered Voice and Agency, Courtly Love Tradition, Ethnomusicology of North India

सारांश

यह शोधपत्र हरियाणवी लोकसाहित्य की समृद्ध सांग-परंपरा के अंतर्गत रचित “अधराजण” श्रृंखला की रागणियों (1-8) का साहित्यिक, छंदात्मक तथा लोक-सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण प्रस्तुत करता है। अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य इन रागणियों में निहित कथात्मक संरचना, भाव-संवेदना, स्त्री-अस्मिता, सामाजिक अंतर्ध्वनियों तथा पिंगल शास्त्र के अंतर्गत निहित छंद-विधान का सम्यक् परीक्षण करना है। यह शोध इस तथ्य को रेखांकित करता है कि हरियाणवी रागणी केवल मौखिक लोक-अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि एक सुसंगठित काव्यात्मक परंपरा है, जिसमें लोक और शास्त्र का संतुलित समन्वय विद्यमान है।

अध्ययन से स्पष्ट होता है कि रागणी 1 से 8 तक कथा क्रमशः सौंदर्य-बोध, भाव-जागरण, दरबारी संपर्क, प्रेमानुभूति, सामाजिक तनाव और आत्मसम्मान पूर्ण स्वीकृति की ओर विकसित होती है। रसकपूर का चरित्र इस श्रृंखला में विशेष महत्व रखता है, क्योंकि वह केवल नायिका नहीं, बल्कि आत्मनिर्णय और स्त्री-स्वायत्तता का प्रतीक बनकर उभरती है। दूसरी ओर, सवाई जगत सिंह के माध्यम से राजसत्ता और मानवीय संवेदना के मध्य अंतर्द्वंद्व अभिव्यक्त होता है।

छंदात्मक विश्लेषण से ज्ञात होता है कि इन रागणियों में वर्णिक-मिश्रित छंद, संतुलित यति, सशक्त तुकांत योजना तथा लयात्मक पुनरावृत्ति का प्रभावशाली प्रयोग हुआ है। अनुप्रास, रूपक, उपमा और संकेतात्मकता जैसे अलंकार भावाभिव्यक्ति को अधिक सघन बनाते हैं। अध्ययन का निष्कर्ष है कि “अधराजण” की रागणियाँ हरियाणवी लोककाव्य की सांस्कृतिक गहराई, सौंदर्य बोध और वैचारिक चेतना का महत्वपूर्ण उदाहरण हैं तथा भारतीय लोकसाहित्य को व्यापक अकादमिक विमर्श में प्रतिष्ठित करने की पर्याप्त क्षमता रखती हैं।

मुख्य शब्द

हरियाणवी लोककाव्य, रागणी परंपरा, पिंगल छंदशास्त्र, मौखिक प्रदर्शन संस्कृति, कथात्मक काव्यशिल्प, सामाजिक-सांस्कृतिक विमर्श, स्त्री-स्वर एवं स्वायत्तता, उत्तर भारतीय लोक-संगीत विज्ञान

अध्ययन की पृष्ठभूमि एवं संदर्भ

“इस शोध-पत्र में अपनाई गई विश्लेषणात्मक पद्धति का आधार लेखक के पूर्ववर्ती अध्ययनों में निहित है, जिनमें हरियाणवी रागणी परंपरा के विभिन्न चरणों का विश्लेषण प्रस्तुत किया जा चुका है (आशोधिया, 2026a; 2026b)।”

हरियाणवी लोकसाहित्य की सांग-परंपरा भारतीय सांस्कृतिक विरासत का एक जीवंत और गतिशील अंग रही है, जिसमें लोकजीवन की संवेदनाएँ, सामाजिक संरचनाएँ, नैतिक मान्यताएँ तथा भावात्मक अभिव्यक्तियाँ एक समेकित रूप में प्रकट होती हैं। इस परंपरा के अंतर्गत विकसित रागणी विधान केवल गायन-कला का माध्यम है, बल्कि यह कथात्मकता, काव्यशिल्प और सांस्कृतिक विमर्श का एक सशक्त साधन भी है। प्रस्तुत अध्ययन “अधराजण” श्रृंखला की रागणियों (1-8) पर केंद्रित है, जिनमें वृत्तांत, रागणी और विश्लेषण—इन तीनों स्तरों का सुसंगठित समन्वय दिखाई देता है। यही त्रिस्तरीय संरचना इस कृति को परंपरागत लोकगायन से आगे बढ़ाकर एक सुविचारित साहित्यिक एवं शोधपरक पाठ के रूप में स्थापित करती है।

“अधराजण” की कथा-भूमि ऐतिहासिक-सांस्कृतिक संदर्भों से प्रेरित है, जहाँ एक ओर राजदरबारी जीवन, सत्ता-व्यवस्था और सामाजिक पदानुक्रम की जटिलताएँ उपस्थित हैं, वहीं दूसरी ओर एक कलाकार—रसकपूर—के माध्यम से प्रेम, आत्मसम्मान, संघर्ष और स्त्री-अस्मिता के प्रश्न उभरते हैं। रागणी 1 से 8 तक का क्रम एक क्रमिक कथानक-विकास को दर्शाता है—प्रारंभिक आकर्षण और जिज्ञासा से लेकर आत्ममंथन, दरबारी प्रस्तुति, प्रेम की तीव्रता, सामाजिक विरोध, और अंततः शर्तों के साथ संबंध की स्वीकृति तक। इस क्रम में वृत्तांत कथात्मक आधार प्रदान करता है, रागणी उस भाव भूमि को गेय और सौंदर्य पूर्ण रूप में अभिव्यक्त करती है, जबकि विश्लेषण उस समग्र संरचना का वैचारिक और आलोचनात्मक उद्घाटन करता है।

इस अध्ययन का संदर्भ विशेष रूप से इसलिए महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि यह लोकसाहित्य को केवल परंपरा या मनोरंजन के रूप में नहीं, बल्कि एक गहन बौद्धिक और सांस्कृतिक पाठ के रूप में देखने का दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। “अधराजण” की रागणियों में निहित पिंगल-आधारित छंद संरचना, अलंकारिक विन्यास, और

मंचीय गेयता इस बात का प्रमाण है कि लोककाव्य भी शास्त्रीय अनुशासन और सौंदर्य शास्त्र के उच्च मानकों का पालन करता है। साथ ही, रसकपूर का चरित्र एक ऐसी नायिका के रूप में उभरता है जो केवल प्रेम का विषय नहीं, बल्कि निर्णय लेने वाली, शर्त रखने वाली और सामाजिक मानदंडों को चुनौती देने वाली सशक्त स्त्री-स्वर का प्रतिनिधित्व करती है।

अतः यह अध्ययन उस व्यापक परिप्रेक्ष्य में स्थित है जहाँ लोक और शास्त्र, परंपरा और आधुनिकता, तथा भाव और विचार का संगम होता है। “अधराजण” की रागणियाँ इस बात का सशक्त उदाहरण हैं कि किस प्रकार हरियाणवी सांग-शैली समकालीन शोध और अंतरराष्ट्रीय साहित्यिक विमर्श में अपनी प्रासंगिकता सिद्ध कर सकती है। यह पृष्ठभूमि न केवल इस कृति के साहित्यिक महत्व को रेखांकित करती है, बल्कि इसे एक सांस्कृतिक दस्तावेज के रूप में भी स्थापित करती है, जो भारतीय लोक-परंपराओं की गहराई, विविधता और वैचारिक समृद्धि को उद्घाटित करता है।

साहित्य समीक्षा

हरियाणवी लोकसाहित्य, विशेषतः सांग-परंपरा और रागणी विधा, भारतीय लोककाव्य की उस समृद्ध धारा का प्रतिनिधित्व करती है जहाँ मौखिक परंपरा, संगीतात्मक अभिव्यक्ति और सामाजिक यथार्थ एक-दूसरे में अंतर्ग्रथित होते हैं। इस क्षेत्र में विभिन्न विद्वानों और लोकसाहित्य-चिंतकों ने समय-समय पर महत्वपूर्ण कार्य किए हैं, जिनसे यह स्पष्ट होता है कि लोककाव्य केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि समाज के सांस्कृतिक मानस का दर्पण भी है।

रामचन्द्र शुक्ल ने हिंदी साहित्य के इतिहास लेखन में लोकधारा को ‘जनमानस की अभिव्यक्ति’ के रूप में स्वीकार करते हुए यह प्रतिपादित किया कि साहित्य का वास्तविक आधार लोकजीवन की संवेदनाओं में निहित होता है। उनके अनुसार, लोककाव्य में व्यक्त भावनाएँ कृत्रिम न होकर स्वाभाविक और सामूहिक अनुभवों से उपजी होती हैं। इसी संदर्भ में हरियाणवी रागणियाँ भी जनजीवन के यथार्थ, संघर्ष और सांस्कृतिक मूल्यों को सजीव रूप में प्रस्तुत करती हैं।

लोकनाट्य और सांग-परंपरा के अध्ययन में हजारी प्रसाद द्विवेदी का दृष्टिकोण विशेष उल्लेखनीय है। उन्होंने भारतीय लोक परंपराओं को ‘जीवंत सांस्कृतिक स्मृति’ के रूप में देखा, जो समय के साथ परिवर्तित होते हुए भी अपनी मूल आत्मा को संरक्षित रखती हैं। “अधराजण” की रागणियों में यह जीवंतता स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है, जहाँ परंपरा और समकालीन संवेदना का संगम दिखाई देता है।

हरियाणवी सांग और रागणी पर विशिष्ट अध्ययन करने वाले विद्वानों में डॉ. महेन्द्र भानावत का योगदान उल्लेखनीय है। उन्होंने लोकनाट्य की संरचना, मंचीयता और सामाजिक भूमिका पर प्रकाश डालते हुए यह स्पष्ट किया कि सांग केवल नाट्य-प्रदर्शन नहीं, बल्कि सामुदायिक संवाद का माध्यम है। “अधराजण” की रागणियाँ इसी संवादपरक परंपरा का विस्तार हैं, जहाँ कथानक, गायन और संवाद के माध्यम से सामाजिक विमर्श को अभिव्यक्ति मिलती है।

छंदशास्त्र और पिंगल परंपरा के संदर्भ में रामधारी सिंह दिनकर तथा नागार्जुन जैसे कवियों ने भी लोक छंदों की महत्ता को स्वीकार किया है। दिनकर ने अपनी काव्य-चर्चाओं में लोक लय और छंद के स्वाभाविक प्रवाह को काव्य की आत्मा माना है, जबकि नागार्जुन ने लोकभाषा और जनभाषा को काव्य अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बताया। “अधराजण” की रागणियों में वर्णिक मिश्रित छंद, लयात्मकता और तुकांत संरचना का प्रयोग इन सिद्धांतों की पुष्टि करता है।

स्त्री-विमर्श के परिप्रेक्ष्य में सिमोन द बोउवार की कृति *The Second Sex* यह स्थापित करती है कि स्त्री की पहचान केवल सामाजिक संरचनाओं द्वारा निर्धारित नहीं होती, बल्कि वह स्वयं अपने अस्तित्व का निर्माण करती है। इसी प्रकार भारतीय संदर्भ में महाश्वेता देवी ने अपनी रचनाओं में स्त्री की संघर्षशील चेतना और आत्मनिर्णय को प्रमुखता दी है। “अधराजण” की रागणी 8 में रसकपूर का शर्त-बद्ध निर्णय इसी स्त्री-स्वायत्तता और आत्मसम्मान का सशक्त उदाहरण है।

लोक संगीत और एथ्नोम्यूज़िकोलॉजी के क्षेत्र में ए. के. रामानुजन का कार्य भी उल्लेखनीय है, जिन्होंने भारतीय लोककथाओं और मौखिक परंपराओं को ‘बहुस्तरीय अर्थ-प्रणाली’ के रूप में विश्लेषित किया। उनके अनुसार,

लोक रचनाएँ केवल एकल अर्थ तक सीमित नहीं होतीं, बल्कि उनमें सांस्कृतिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक स्तरों पर अनेक अर्थ निहित होते हैं। “अधराजण” की रागणियाँ भी इसी बहुस्तरीयता का परिचय देती हैं, जहाँ प्रेम, सत्ता, नैतिकता और सामाजिक संरचना एक साथ उपस्थित हैं।

उपरोक्त साहित्यिक परंपराओं और विद्वानों के विचारों के आलोक में यह स्पष्ट होता है कि “अधराजण” की रागणियाँ हरियाणवी लोकसाहित्य की उस समृद्ध परंपरा का प्रतिनिधित्व करती हैं, जिसमें कथात्मकता, छंदशास्त्र, सांस्कृतिक विमर्श और स्त्री-चेतना का सशक्त समन्वय है। यद्यपि हरियाणवी रागणी साहित्य पर सीमित शैक्षणिक शोध उपलब्ध है, तथापि यह अध्ययन उस रिक्ति को भरने का प्रयास करता है और लोककाव्य को अंतरराष्ट्रीय शोध-विमर्श में स्थापित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण योगदान प्रस्तुत करता है।

शोध पद्धति

“इस अध्ययन में प्रयुक्त पद्धति लेखक के पूर्व प्रकाशित शोध कार्यों के अनुरूप है, जिनमें पिंगल शास्त्र के आलोक में रागणियों का पाठ-विश्लेषण किया गया है (आशोधिया, 2026a; 2026b)।”

प्रस्तुत शोधपत्र में “अधराजण” श्रृंखला की रागणियों (1-8) का अध्ययन एक गुणात्मक एवं व्याख्यात्मक पद्धति के अंतर्गत किया गया है, जिसमें लोकसाहित्य, काव्यशास्त्र, सांस्कृतिक अध्ययन तथा स्त्री-विमर्श के अंतःविषय दृष्टिकोण का समन्वित उपयोग किया गया है। इस शोध का उद्देश्य केवल पाठ का सामान्य वर्णन प्रस्तुत करना नहीं, बल्कि उसके अंतर्निहित अर्थ-तत्वों, सांस्कृतिक संकेतों, भाव-संरचनाओं तथा छंदात्मक विन्यास का गहन विश्लेषण करना है, जिससे यह स्पष्ट किया जा सके कि हरियाणवी रागणी परंपरा किस प्रकार एक सुसंगठित साहित्यिक और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के रूप में कार्य करती है।

अध्ययन की आधार-सामग्री के रूप में “अधराजण” की रागणियाँ (1-8), उनके संबंधित वृत्तांत तथा प्रत्येक रागणी के साथ संलग्न विश्लेषणात्मक टिप्पणियों को एक समेकित पाठ के रूप में ग्रहण किया गया है। इस त्रिस्तरीय संरचना—वृत्तांत, रागणी और विश्लेषण—को एक इकाई मानते हुए उसका अध्ययन किया गया है, जिससे कथानक, काव्य और आलोचना के अंतर्संबंधों को स्पष्ट रूप से समझा जा सके। इस प्रक्रिया में पाठ-विश्लेषण के माध्यम से शब्द चयन, अलंकारिक विन्यास, प्रतीक-योजना और भाव-प्रवाह का सूक्ष्म परीक्षण किया गया है, जबकि कथात्मक विश्लेषण के अंतर्गत कथा-विकास, पात्र-निर्माण तथा घटनाक्रम की संरचना का विवेचन किया गया है। विशेष रूप से रसकपूर और सवाई जगत सिंह के चरित्रों के माध्यम से प्रेम, सत्ता, सामाजिक द्वंद्व और मानवीय संवेदनाओं की जटिलता को समझने का प्रयास किया गया है।

पिंगल शास्त्र के संदर्भ में छंदात्मक विश्लेषण इस शोध का एक प्रमुख आधार है, जिसके अंतर्गत रागणियों में प्रयुक्त वर्णिक मिश्रित छंद, यति-विन्यास, तुकांत व्यवस्था तथा लयात्मक संरचना का परीक्षण किया गया है। इस विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि लोककाव्य में भी छंदशास्त्रीय अनुशासन और ध्वनि-सौंदर्य का अत्यंत सुसंगत और प्रभावकारी प्रयोग होता है, जो न केवल श्रुति माधुर्य को सुदृढ़ करता है, बल्कि मंचीय प्रस्तुति को भी प्रभावशाली बनाता है। इसके साथ ही सांस्कृतिक एवं लोक-परिप्रेक्ष्य के अंतर्गत यह देखा गया है कि रागणियाँ किस प्रकार हरियाणवी समाज के मूल्य बोध, परंपराओं, राजदरबारी संरचनाओं तथा नैतिक मान्यताओं को प्रतिबिंबित करती हैं।

इस अध्ययन में स्त्री-विमर्शात्मक दृष्टिकोण का भी समावेश किया गया है, विशेषतः रागणी 8 के विश्लेषण में, जहाँ रसकपूर का चरित्र आत्मनिर्णय, स्वाभिमान और सामाजिक प्रतिरोध का प्रतीक बनकर उभरता है। इस परिप्रेक्ष्य में नायिका की शर्त-बद्ध स्वीकृति को केवल भावनात्मक प्रतिक्रिया न मानकर, एक सशक्त वैचारिक हस्तक्षेप के रूप में व्याख्यायित किया गया है, जो लोकसाहित्य में स्त्री-स्वायत्तता के उभरते स्वर को रेखांकित करता है।

साथ ही, इस शोध में व्याख्यात्मक आलोचना की पद्धति को अपनाया गया है, जिसके माध्यम से पाठ के बहुस्तरीय अर्थों का उद्घाटन किया गया है। अध्ययन को सुदृढ़ करने के लिए लोककाव्य, छंदशास्त्र और सांस्कृतिक अध्ययन से संबंधित स्थापित सैद्धांतिक अवधारणाओं का सहारा लिया गया है, जिससे “अधराजण” की रागणियों को व्यापक साहित्यिक और अकादमिक विमर्श में स्थापित किया जा सके। पाठ-आधारित साक्ष्यों, सांस्कृतिक संदर्भों तथा सैद्धांतिक आधारों के संतुलित उपयोग द्वारा इस शोध में विश्वसनीयता और वैधता सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है।

इस प्रकार प्रस्तुत शोध पद्धति न केवल “अधराजण” की रागणियों के साहित्यिक, छंदात्मक और सांस्कृतिक विश्लेषण को समग्रता प्रदान करती है, बल्कि इसे अंतरराष्ट्रीय शोध मानकों के अनुरूप एक सुव्यवस्थित, सुसंगत और विश्वसनीय अध्ययन के रूप में स्थापित भी करती है।

कथात्मक एवं साहित्यिक विश्लेषण

“अधराजण” श्रृंखला की रागणियाँ (1-8) एक सुसंगठित कथात्मक प्रवाह का निर्माण करती हैं, जिसमें वृत्तांत और काव्य परस्पर पूरक रूप में विकसित होते हैं। यह श्रृंखला केवल घटनाओं का क्रम नहीं, बल्कि भावों, विचारों और सामाजिक-सांस्कृतिक अंतः क्रियाओं का एक गतिशील ताना-बाना प्रस्तुत करती है। प्रत्येक रागणी अपने भीतर एक विशिष्ट भाव भूमि का निर्माण करती है, जो अगले प्रसंग के लिए आधार भूमि तैयार करती है।

रागणी 1 और 2 में कथा का प्रारंभिक आधार निर्मित होता है, जहाँ रसकपूर के व्यक्तित्व, उसकी कला और उसके सामाजिक परिवेश का परिचय मिलता है। इन प्रारंभिक रागणियों में नायिका का सौंदर्य और कला केवल बाह्य आकर्षण तक सीमित नहीं है, बल्कि वह उसकी पहचान और अस्तित्व का केंद्र है। यहाँ लोकभाषा के सहज प्रयोग के माध्यम से उसकी संघर्षपूर्ण यात्रा और आत्मनिर्भरता का संकेत मिलता है, जो आगे चलकर उसके निर्णयों की पृष्ठभूमि तैयार करता है।

रागणी 3 और 4 में कथा का विस्तार दरबारी संदर्भों की ओर होता है, जहाँ रसकपूर की ख्याति राजमहल तक पहुँचती है। इस चरण में उसकी कला सामाजिक मान्यता प्राप्त करती है और वह लोक से शास्त्र की ओर संक्रमण करती हुई दिखाई देती है। यहाँ प्रयुक्त बिंब और प्रतीक—जैसे सौंदर्य की तुलना चंद्रमा, सुगंध और संगीत से—उसके व्यक्तित्व को एक आदर्शकृत रूप प्रदान करते हैं। यह आदर्शकरण केवल प्रशंसा नहीं, बल्कि उस सांस्कृतिक प्रक्रिया का हिस्सा है, जिसमें लोक कलाकार को राजकीय संरचना में स्थान मिलता है।

रागणी 5 इस श्रृंखला का एक महत्वपूर्ण मोड़ प्रस्तुत करती है, जहाँ बाह्य वैभव और आंतरिक सत्य के बीच द्वंद्व स्पष्ट रूप से उभरता है। केशव (किरशन) द्वारा दिया गया चेतावनी पूर्ण स्वर रागणी की पंक्तियों में इस प्रकार अभिव्यक्त होता है—

**“रंग महल रपय्या धन दौलत सब, धरी ए धराई रहज्या सै /
जब वक्त की आँधी चालै सै फेर, महल अटारी भी ढहज्या सै।”**

इन पंक्तियों में ‘महल अटारी’ का रूपक सत्ता और वैभव की क्षण भंगुरता को इंगित करता है, जबकि ‘वक्त की आँधी’ समय की अनिवार्यता का प्रतीक है। इसी रागणी में “दूर के ढोल सुहाने लागै” जैसे मुहावरे का प्रयोग मोह और भ्रम की सार्वभौमिक प्रवृत्ति को रेखांकित करता है। यह रागणी न केवल कथानक को गहराई प्रदान करती है, बल्कि नायिका के मानसिक द्वंद्व को भी स्थापित करती है।

रागणी 6 में राजा सवाई जगत सिंह के दृष्टिकोण से प्रेम की अभिव्यक्ति सामने आती है, जहाँ आकर्षण एक तीव्र अभिलाषा में परिवर्तित हो जाता है। टेक— “मनै कोए उसतै मिलवादो, मेरा मन मिलणे नै तरसै”— राजा की व्याकुलता और भावनात्मक अधीरता को प्रत्यक्ष रूप में व्यक्त करती है। यहाँ “राजकाज में जी ना लगता” पंक्ति सत्ता और प्रेम के द्वंद्व को स्पष्ट करती है, जहाँ एक शासक अपने दायित्वों से विमुख होकर व्यक्तिगत भावनाओं के अधीन हो जाता है। यह रागणी शृंगार रस के उत्कर्ष के साथ-साथ राजनीतिक और सामाजिक संदर्भों को भी अंतर्निहित करती है।

रागणी 7 में यह प्रेम निजी अनुभूति से सार्वजनिक उद्घोषणा में परिवर्तित हो जाता है। राजा का यह कथन—

**“सामन्त और दरबारी सुणल्यो, धरल्यो मेरी बात पै ध्यान /
दिल की प्यारी बणज्या राणी, ऐसा लाइयो कोए मिजान”—**

केवल प्रेम का इज़हार नहीं, बल्कि राजकीय सत्ता के माध्यम से सामाजिक संरचनाओं को चुनौती देने का प्रयास भी है। इस रागणी में “इशक बुरा जन्जाळ जगत में” जैसी पंक्तियाँ प्रेम को एक सामाजिक संकट के रूप में प्रस्तुत करती हैं, जबकि “कणि मणि का घाटा कोन्या, धन पाणी की ज्यूँ बाह ढूँगा” प्रेम के लिए भौतिक संपदा के त्याग की घोषणा करती हैं। यह रागणी सत्ता, प्रेम और विद्रोह के त्रिकोणीय संबंध को उजागर करती है।

रागणी 8 इस श्रृंखला का चरम बिंदु है, जहाँ नायिका रसकपूर अपनी शर्तों के साथ प्रेम को स्वीकार करती है। टेक— “मैं तेरी बहू हो बणूंगी हो, जै तू मेरी शर्त बजावै”— स्त्री के आत्मनिर्णय और स्वायत्तता की स्पष्ट उद्घोषणा है। इस रागणी में नायिका केवल प्रेमिका नहीं, बल्कि एक विचारशील और स्वाभिमानी व्यक्तित्व के रूप में उभरती है, जो सामाजिक संरचनाओं को चुनौती देते हुए अपने अधिकारों की स्थापना करती है। “बुरा लगे या भला लगे सदा, हक़ की बात कहूंगी मैं” जैसी पंक्तियाँ उसके नैतिक साहस और सत्यनिष्ठा को रेखांकित करती हैं, जबकि “नौकर चाकर, गरीब आदमी पै, ना अत्याचार सहूंगी मैं” सामाजिक न्याय के प्रति उसकी प्रतिबद्धता को दर्शाती है।

समग्र रूप से देखा जाए तो रागणी 1 से 8 तक का यह क्रम एक सुसंगत कथात्मक विकास को प्रस्तुत करता है, जिसमें प्रारंभिक आकर्षण से लेकर आत्मनिर्णय तक की यात्रा क्रमिक रूप से विकसित होती है। इन रागणियों में प्रयुक्त लोकभाषा, मुहावरे, प्रतीक और छंदात्मक संरचनाएँ न केवल काव्य की सौंदर्यात्मकता को सुदृढ़ करती हैं, बल्कि उसे एक सशक्त सांस्कृतिक दस्तावेज के रूप में भी स्थापित करती हैं। इस प्रकार “अधराजण” की यह श्रृंखला हरियाणवी लोककाव्य में कथात्मकता, भाव-संवेदना और सामाजिक विमर्श का एक उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है, जो अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी अध्ययन और विश्लेषण के लिए अत्यंत उपयुक्त है।

पिंगल एवं छंदात्मक विश्लेषण

“अधराजण” श्रृंखला की रागणियाँ (1-8) हरियाणवी सांग-परंपरा के अंतर्गत विकसित उस छंद-संवेदना का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं, जिसमें लोकलय, पिंगल शास्त्र के सिद्धांत और मंचीय गेयता का सुसंगत समन्वय दृष्टिगोचर होता है। यद्यपि रागणी एक लोकाभिव्यक्ति है, तथापि इसके भीतर छंद-विन्यास, मालिक संतुलन, यति-निर्धारण और तुकांत योजना का जो अनुशासन दिखाई देता है, वह इसे शास्त्रीय काव्य परंपरा से भी सुदृढ़ रूप में जोड़ता है। प्रस्तुत अध्ययन में रागणियों के छंदात्मक स्वरूप का विश्लेषण पिंगल शास्त्र की परंपरागत अवधारणाओं—वर्ण, मात्रा, गण, यति और लय—के आलोक में किया गया है।

इन रागणियों का प्रमुख छंद-विन्यास **वर्णिक-मिश्रित छंद** के रूप में पहचाना जा सकता है, जिसमें प्रत्येक पंक्ति लगभग 22 से 28 मात्राओं के मध्य विस्तारित होती है। यह विस्तार कठोर मालिक बंधन के स्थान पर लयात्मक संतुलन पर आधारित है, जो लोकगायन की प्रकृति के अनुरूप है। उदाहरणतः रागणी 5 की पंक्ति—“रंग महल रपय्या धन दौलत सब, धरी ए धराई रहज्या सै”—में वर्णों और मात्राओं का प्रवाह एक निश्चित गण-योजना का अनुसरण न करते हुए भी 8+8+6 या 10+10+4 के यति-विन्यास के माध्यम से संतुलित लय उत्पन्न करता है। यही प्रवृत्ति रागणी 6 की टेक “मनै कोए उसतै मिलवादो, मेरा मन मिलणे नै तरसै” तथा रागणी 7 की उद्घोषणात्मक पंक्ति “सामन्त और दरबारी सुणल्यो, धरल्यो मेरी बात पै ध्यान” में भी स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है।

यति का प्रयोग इन रागणियों की एक विशिष्ट विशेषता है, जो न केवल छंद की संरचना को संतुलित करता है, बल्कि गायन के दौरान भाव-प्रस्तुति को भी सशक्त बनाता है। सामान्यतः यति 8+8+6 अथवा 10+8+6 के रूप में विभाजित होती है, जिससे प्रत्येक पंक्ति तीन खंडों में विभक्त होकर श्रवणीय स्पष्टता प्रदान करती है। यह यति-विन्यास लोकगायकों को स्वर-उतार-चढ़ाव तथा भावाभिव्यक्ति में सहजता प्रदान करता है।

तुकांत व्यवस्था की दृष्टि से इन रागणियों में पदानुप्रास का अत्यंत प्रभावकारी प्रयोग हुआ है। “सै”, “भरम”, “गरम”, “जाळे”, “तरसै”, “बरसै”, “डर सै”, “मर सै” आदि तुकांत ध्वनियाँ न केवल लयात्मकता को पुष्ट करती हैं, बल्कि श्रोता के मन में एक श्रुति मधुर आवृत्ति का निर्माण करती हैं। यह तुकांत योजना टेक और अंतरे के बीच एक सुसंगत ध्वनि-संबंध स्थापित करती है, जो सांग-शैली के मंचीय प्रदर्शन में अत्यंत प्रभावकारी सिद्ध होती है।

लय और गति का संतुलन इन रागणियों की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता है। रागणी 5 में चेतावनी और उपदेशात्मक भाव के कारण लय अपेक्षाकृत मंथर है, जबकि रागणी 6 और 7 में प्रेमोन्माद और उत्कंठा के कारण लय तीव्र हो जाती है। रागणी 8 में यह लय पुनः संतुलित होकर गंभीर और संयत स्वर ग्रहण करती है, जो नायिका के आत्मनिर्णय और विवेकशीलता को अभिव्यक्त करने में सहायक है। इस प्रकार लय केवल छंद का तकनीकी तत्व नहीं, बल्कि भावानुकूल अभिव्यक्ति का सक्रिय साधन बन जाती है।

अलंकारिकता और ध्वनि-संरचना भी छंदात्मक सौंदर्य को सुदृढ़ करती हैं। अनुप्रास जैसे “धन दौलत-धराई”, “मन बुद्धि पै पड़ज्या जाळे” तथा यमक और पुनरुक्ति के प्रयोग से ध्वनि-सौंदर्य में वृद्धि होती है। रूपक और उपमा जैसे अलंकार छंद के भीतर अर्थ-गहनता को बढ़ाते हैं, जबकि उनकी ध्वन्यात्मक संरचना लय के साथ समन्वित रहती है। इस प्रकार ध्वनि और अर्थ का यह द्वंदात्मक संबंध पिंगल शास्त्र की उस मूल अवधारणा को पृष्ट करता है, जिसमें शब्द और अर्थ का सामंजस्य काव्य-सौंदर्य का आधार माना गया है।

राग-संगति की दृष्टि से भी इन रागणियों का विश्लेषण महत्वपूर्ण है। रागणी 5 की गंभीरता भैरवी अथवा जोग जैसे रागों के अनुकूल प्रतीत होती है, जबकि रागणी 6 और 7 की भाव-उत्कंठा बिहाग या केदार जैसे रागों में अधिक प्रभावी ढंग से व्यक्त हो सकती है। रागणी 8 की संतुलित और आत्म संयत अभिव्यक्ति भैरवी या मिश्रित लोक-रागों के साथ सामंजस्य स्थापित करती है। यह राग-संगति दर्शाती है कि छंद और संगीत का संबंध केवल औपचारिक नहीं, बल्कि भाव-प्रधान और अभिव्यक्तिपरक है।

समग्रतः “अधराजण” की रागणियाँ यह सिद्ध करती हैं कि हरियाणवी लोककाव्य में पिंगल शास्त्र के सिद्धांतों का अनुपालन एक जीवंत और लचीले रूप में होता है। यहाँ छंद कठोर नियमों का पालन करते हुए भी लोकलय की स्वाभाविकता को बनाए रखता है, जिससे काव्य में गेयता, संप्रेषणीयता और सौंदर्य का अद्वितीय समन्वय संभव हो पाता है। यह छंदात्मक संरचना न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि इसे एक सशक्त मंचीय और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के रूप में भी स्थापित करती है, जो अंतरराष्ट्रीय स्तर पर लोककाव्य और छंदशास्त्र के अध्ययन में विशेष स्थान रखती है।

चर्चा

प्रस्तुत शोध-पत्र में *अधराजण* श्रृंखला की रागणी 1-8 के आधार पर हरियाणवी सांग-परंपरा, पिंगल शास्त्र और लोक-सांस्कृतिक चेतना के अंतर्संबंधों का जो विश्लेषण किया गया है, वह इस निष्कर्ष की ओर संकेत करता है कि यह रचनाएँ केवल लोक-मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि एक बहुस्तरीय सांस्कृतिक, सौंदर्यात्मक और वैचारिक विमर्श का जीवंत दस्तावेज हैं। इस चर्चा खंड में पूर्ववर्ती सभी अनुभागों—पृष्ठभूमि, साहित्य समीक्षा, शोध पद्धति, कथात्मक विश्लेषण तथा छंदात्मक अध्ययन—को एकीकृत करते हुए उनके निहितार्थों का सम्यक् मूल्यांकन प्रस्तुत किया जा रहा है।

अध्ययन की पृष्ठभूमि एवं संदर्भ के अंतर्गत यह स्पष्ट हुआ कि *अधराजण* की रागणियाँ एक विशिष्ट ऐतिहासिक-सांस्कृतिक परिवेश से उद्भूत हैं, जहाँ राजसत्ता, लोकजीवन और कलात्मक अभिव्यक्ति परस्पर संवाद रत हैं। रसकपूर और सवाई जगत सिंह के प्रसंगों के माध्यम से सत्ता और संवेदना के द्वंद्व को जिस प्रकार प्रस्तुत किया गया है, वह भारतीय लोक कथात्मक परंपरा में विरल उदाहरणों में गिना जा सकता है। इस संदर्भ में यह रेखांकित करना आवश्यक है कि रागणी 1-8 की वृत्तांतात्मक संरचना केवल घटनाओं का क्रम नहीं, बल्कि भाव-प्रस्फुटन की क्रमिक यात्रा है, जो नायिका के आत्मबोध से लेकर नायक के प्रेमोन्माद और अंततः सामाजिक-राजनीतिक टकराव तक विस्तृत होती है।

साहित्य समीक्षा के आलोक में यह प्रतिपादित हुआ कि भारतीय काव्य परंपरा में भक्ति, श्रृंगार और नीति का जो त्रिवेणी-संगम देखा जाता है, वह यहाँ लोकभाषा के माध्यम से पुनर्सृजित होता है। इस शोध में उल्लिखित प्रमुख साहित्यकारों और लोकधाराओं के संदर्भ से यह निष्कर्ष निकलता है कि *अधराजण* की रागणियाँ परंपरा और आधुनिकता के मध्य एक सेतु का कार्य करती हैं। विशेषतः स्त्री-चेतना और आत्मसम्मान के संदर्भ में रसकपूर का चरित्र आधुनिक विमर्शों—विशेषकर नारीवादी दृष्टिकोण—से भी सामंजस्य स्थापित करता है, जो इस रचना को समकालीन प्रासंगिकता प्रदान करता है।

शोध पद्धति के अंतर्गत अपनाई गई गुणात्मक, व्याख्यात्मक और पाठ-आधारित विश्लेषण पद्धति ने यह सुनिश्चित किया कि प्रत्येक रागणी के मूल पाठ, उसके वृत्तांत और विश्लेषण के बीच एक संतुलित संबंध स्थापित हो सके। यह पद्धति इस दृष्टि से भी सार्थक सिद्ध हुई कि इससे रचना के बहुस्तरीय अर्थ-तत्त्वों—भावात्मक, सांस्कृतिक, छंदात्मक—को सम्यक् रूप में उद्घाटित किया जा सका। विशेष रूप से, मूल पंक्तियों के उद्धरणों के माध्यम से प्रस्तुत विश्लेषण ने इस शोध को प्रामाणिकता और पाठ-सन्निकटता प्रदान की, जो किसी भी अंतरराष्ट्रीय शोध-पत्र के लिए अनिवार्य मानी जाती है।

कथात्मक एवं साहित्यिक विश्लेषण के आधार पर यह स्पष्ट हुआ कि रागणी 1-8 में भावों का एक क्रमिक विकास दृष्टिगोचर होता है। प्रारंभिक रागणियों में जहाँ आत्ममंथन और जीवन-दर्शन का स्वर प्रमुख है—जैसे “दूर के ढोल सुहाने लागें” या “महल अटारी भी ढहज्या सै”—वहीं मध्य रागणियों में प्रेम की व्याकुलता और आकर्षण का उत्कर्ष दिखाई देता है—“मनै कोए उसतै मिलवादो” जैसे पद इसके सशक्त उदाहरण हैं। अंतिम रागणियों में यह भावनात्मक प्रवाह एक निर्णायक मोड़ पर पहुँचता है, जहाँ रसकपूर अपने आत्मसम्मान और शर्तों के माध्यम से एक स्वतंत्र स्त्री के रूप में उभरती है—“**मैं तेरी बहू हो बणूंगी हो, जै तू मेरी शर्त बजावै।**” यह संक्रमण केवल कथात्मक नहीं, बल्कि वैचारिक और सांस्कृतिक भी है, जो इस रचना को विशेष महत्व प्रदान करता है।

पिंगल एवं छंदात्मक विश्लेषण से यह तथ्य उभरकर सामने आया कि इन रागणियों में वर्णिक मिश्रित छंद, संतुलित यति-विन्यास तथा पदानुप्रास आधारित तुकांत योजना का अत्यंत सधा हुआ प्रयोग हुआ है। प्रत्येक रागणी में 22 से 28 मात्राओं के बीच की लयात्मक संरचना, टेक की पुनरावृत्ति, तथा अनुप्रास, रूपक और उपमा जैसे अलंकारों का समन्वय, इसे मंचीय प्रस्तुति के लिए अत्यंत उपयुक्त बनाता है। इस दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि *अधराजण* की रागणियाँ पिंगल शास्त्र के पारंपरिक सिद्धांतों का पालन करते हुए भी एक जीवंत और गतिशील लोक-शैली का सृजन करती हैं, जो शास्त्रीयता और लोकधर्मिता के संतुलन का उत्कृष्ट उदाहरण है।

इन सभी विश्लेषणों के समेकित परिप्रेक्ष्य में यह स्पष्ट होता है कि *अधराजण* की रागणियाँ केवल साहित्यिक पाठ नहीं, बल्कि एक सांस्कृतिक आख्यान हैं, जिनमें इतिहास, समाज, राजनीति, और मानवीय संवेदना के विविध आयाम अंतर्निहित हैं। विशेष रूप से, रसकपूर का चरित्र एक ऐसी सांस्कृतिक नायिका के रूप में उभरता है, जो प्रेम, स्वाभिमान और नैतिकता के बीच संतुलन स्थापित करती है। वहीं सवाई जगत सिंह का चरित्र सत्ता और भावनाओं के द्वंद्व का प्रतीक बन जाता है।

अंततः, यह चर्चा इस निष्कर्ष को पुष्ट करती है कि रागणी 1-8 का यह अध्ययन न केवल हरियाणवी लोकसाहित्य की गहन समझ प्रदान करता है, बल्कि यह भी दर्शाता है कि लोकभाषा में रचित काव्य किस प्रकार वैश्विक साहित्यिक विमर्शों—जैसे जेंडर स्टडीज़, सांस्कृतिक अध्ययन और काव्यशास्त्र—के साथ संवाद स्थापित कर सकता है। इस प्रकार, यह शोध-पत्र अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारतीय लोकसाहित्य की प्रासंगिकता को स्थापित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण योगदान के रूप में देखा जा सकता है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन यह स्थापित करता है कि “अधराजण” श्रृंखला की रागणी 1-8 हरियाणवी सांग-परंपरा की साधारण अभिव्यक्ति न होकर एक सुसंगठित सांस्कृतिक, काव्यात्मक और वैचारिक संरचना का प्रतिनिधित्व करती हैं। वृत्तांत, रागनी और विश्लेषण के त्रिस्तरीय समन्वय से एक ऐसा समग्र साहित्यिक अनुभव निर्मित होता है, जिसमें कथात्मक गहराई, भावात्मक तीव्रता तथा छंदात्मक अनुशासन का संतुलित रूप दिखाई देता है।

रागणियों का क्रमिक विकास आत्ममंथन से आरंभ होकर प्रेम, संघर्ष और अंततः आत्मसम्मान एवं स्वायत्तता तक पहुँचता है। इस प्रक्रिया में रसकपूर का चरित्र एक सशक्त सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में उभरता है, जो स्त्री-चेतना, नैतिक दृढ़ता और आत्मनिर्णय का प्रतिनिधित्व करता है। उसके द्वारा प्रस्तुत शर्तें परंपरागत सत्ता-संरचनाओं को चुनौती देते हुए सामाजिक विमर्श को नई दिशा प्रदान करती हैं। दूसरी ओर, सवाई जगत सिंह का चरित्र सत्ता और संवेदना के द्वंद्व को उजागर करता है, जो मानवीय मनोविज्ञान की जटिलता को रेखांकित करता है।

छंदात्मक विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि वर्णिक मिश्रित छंद, संतुलित यति-विन्यास और तुकांत संरचना का अत्यंत प्रभावकारी प्रयोग इन रागणियों को गेयता और मंचीयता प्रदान करता है। पिंगल शास्त्र के सिद्धांतों का लोक-शैली में रूपांतरण इस काव्य-परंपरा की जीवंतता को सिद्ध करता है।

समग्रतः यह अध्ययन दर्शाता है कि “अधराजण” की रागणियाँ भारतीय लोकसाहित्य को वैश्विक अकादमिक विमर्श से जोड़ने की क्षमता रखती हैं, विशेषकर स्त्री-विमर्श और सांस्कृतिक अध्ययन के संदर्भ में, और इस प्रकार लोककाव्य की अंतरराष्ट्रीय प्रासंगिकता को सुदृढ़ करती हैं।

संदर्भ सूची

1. आशोधिया, ए. के. (2025). *अधराजण: हरियाणवी लोक रागणियों का संग्रह (सांग शैली में) एवं साहित्यिक विश्लेषण* (द्वितीय संस्करण). अविकावनी प्रकाशन।
2. आशोधिया, ए. के. (2026a). *हीर-राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा: पिंगल शास्त्र के आलोक में एक सांस्कृतिक विश्लेषण (रागणी 1-7 के संदर्भ में)*. द एकेडमिक, 4(3)।
3. आशोधिया, ए. के. (2026b). *हीर-राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा: पिंगल शास्त्र के आलोक में एक सांस्कृतिक विश्लेषण (रागणी 8-16 के संदर्भ में)*. शोधपत्र।
4. गांगुली, के. (2019). *भारत में जयपुर नगर का ऐतिहासिक अध्ययन: मुगल साम्राज्य के पतन का विश्लेषण*. संबद्ध शिक्षा में उन्नत एवं शैक्षणिक अनुसंधान पत्रिका, 16(6), 3011-3016.
5. सरकार, जे. (1984). *जयपुर का इतिहास (1503-1938)*. ओरिएंट ब्लैकस्वान।
6. शर्मा, एम. (2020). *जयपुर राज्य का इतिहास*. राजस्थानी ग्रंथागार।
7. प्रकाश, यू. (2023). *रसकपूर: जयपुर की अनारकली और उसका ऐतिहासिक महत्व*. इतिहासनामा।
8. शर्मा, ए. (2021). *रसकपूर*. राजकमल प्रकाशन।
9. टॉड, जेम्स. (2001). *राजस्थान के इतिहास और प्राचीनताएँ* (पुनर्मुद्रित संस्करण). मोतीलाल बनारसीदास।
10. श्यामलदास, के. (1990). *वीर विनोद*. राजस्थान राज्य अभिलेखागार।
11. इलियट, एच. एम., एवं डॉसन, जे. (2006). *भारत का इतिहास (मूल इतिहासकारों के अनुसार)*. संग-ए-मील प्रकाशन।
12. खाफी खॉं, एम. एच. (2006). *मुन्तखब-उल-लुबाब*. संग-ए-मील प्रकाशन।
13. होदिवाला, एस. एच. (1979). *इंडो-मुस्लिम इतिहास पर अध्ययन*. इस्लामिक बुक सर्विस।
14. सिंह, आर. (सम्पा.). (2009). *जयपुर का इतिहास* (संशोधित संस्करण). ओरिएंट ब्लैकस्वान।

